www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
सोमवार 25 मार्च 2019

दैनिक जागरण
सफलता की सीढ़ी एक-एक पायदान पार करके चढ़ी जाती है

अमीर होते जनप्रतिनिधि

भाजपा ने राहुल गांधी की संपत्ति को लेकर उन पर जो आरोप लगाए उनकी सत्यता पर कुछ कहना कठिन है, लेकिन यह बात हैरान तो करती ही है कि 2004 में 55 लाख की जमीन-जायदाद के मालिक 2014 में नौ करोड़ की संपदा के स्वामी कैसे हो गए? यह सवाल इसलिए और चकित करता है, क्योंकि सब जानते हैं कि कांग्रेस अध्यक्ष न तो कोई कारोबारी हैं और न ही डॉक्टर या वकील। पता नहीं भाजपा की ओर से जो सवाल उछाला गया उसका कोई संतोषजनक जवाब मिलेगा या नहीं, लेकिन ऐसे जवाब केवल राहुल गांधी से ही अपेक्षित नहीं हैं। ऐसे न जाने कितने सांसद हैं जो एक कार्यकाल में ही अप्रत्याशित तरीके से अमीर हो जाते हैं। कुछ ऐसी ही स्थिति विधायकों के मामले में भी देखने को मिलती है। जब ऐसे विधायक या सांसद दिन दूनी रात चौगुनी आर्थिक तरक्की करते हैं तब कहीं अधिक संदेह होता है जो न तो कारोबारी होते हैं और न ही राजनीति के अलावा और कुछ करते हैं। देश जानना चाहेगा कि आखिर जनप्रतिनिधियों के यकायक मालदार होने का राज क्या है? यह सही है कि विधायक और सांसद चुनाव के लिए नामांकन दाखिल करते समय हलफनामा देकर अपनी संपत्ति का विवरण देते हैं, लेकिन वे यह कभी नहीं बताते कि उनकी संपत्ति में इतनी तेजी से इजाफा कैसे हुआ? नतीजा यह होता है कि उनकी संपत्ति का विवरण महज एक खबर बनकर रह जाता है। यह इसलिए पर्याप्त नहीं, क्योंकि हाल में सामने आए एक आंकड़े के अनुसार 2014 में फिर से निर्वाचित हुए 153 सांसदों की औसत संपत्ति में 142 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। यह प्रति सांसद औसतन 13.32 करोड़ रुपये रही। यह आंकड़ा यह भी कहता है कि भाजपा के 72 सांसदों की संपत्ति में 7.54 करोड़ रुपये की औसत उछाल आई और कांग्रेस के 28 सांसदों की संपत्ति में औसतन 6.35 करोड़ रुपये की। क्या इसे सामान्य कहा जा सकता है? क्या यह आंकड़ा यह नहीं इंगित करता कि कुछ लोगों के लिए राजनीति अवैध कमाई का जरिया बन गई है?

माना कि कुछ सांसद ऐसे हैं जो बड़े कारोबारी या फिर पुश्तैनी अमीर हैं, लेकिन आखिर इसका क्या मतलब कि सामान्य पृष्ठभूमि और केवल राजनीति ही करने वालों की संपत्ति पांच साल में दो-तीन गुनी हो जाए? दाल में कुछ तो काला है? विडंबना यह है कि इसे जानने का कोई उपाय नहीं कि कुछ जनप्रतिनिधियों की आय को पंख कैसे लग जाते हैं? शायद इसी कारण हाल में सुप्रीम कोर्ट ने इस पर नाराजगी जताई थी कि बेहिसाब संपत्ति अर्जित करने वाले जनप्रतिनिधियों पर निगाह रखने के लिए कोई स्थाई तंत्र क्यों नही बनाया गया है? ऐसा कोई तंत्र बनना समय की मांग है, क्योंकि किसी आम आदमी या फिर कारोबारी की संपत्ति में तनिक भी असामान्य उछाल दिखने पर उसे आयकर विभाग के सवालों से दो-चार होना पड़ता है। आखिर विधायक और सांसद विशिष्ट क्यों हैं? कानून की निगाह में राजा और रंक एक ही होने चाहिए। बेहतर हो कि लोकपाल भी इस सवाल पर विचार करे कि कुछ सांसद इतने कम समय में ही अत्यधिक अमीर कैसे हो जाते हैं?

दलबदलुओं पर दांव

चुनावी मौसम में नेताओं का दलबदल करना नई बात नहीं है। देशभर में सभी पार्टियों में दलबदल हो रहा है। पश्चिम बंगाल में तो पिछले दो दशकों से जोड़-तोड़ की राजनीति हो रही है। कांग्रेस छोड़कर ममता बनर्जी ने जब अपनी तृणमूल कांग्रेस बनाई तो उस समय एक दर्जन से अधिक कद्दावर नेताओं को उन्होंने अपने दल में शामिल कराया था। इसके बाद स्थिति धीरे-धीरे बदलती गई। 2009 के लोकसभा चुनाव के बाद एक बार फिर तृणमूल ने विरोधी दलों में सेंधमारी शुरू की, जो अब तक जारी है। अब भाजपा ने भी तृणमूल की राह पर चलते हुए तृणमूल से लेकर कांग्रेस और माकपा तक में सेंधमारी शुरू कर दी है। यही वजह है कि इस लोकसभा चुनाव में एक-दूसरे को कड़ी टक्कर देने को तैयार राज्य में सत्तारूढ़ तृणमूल और विपक्षी भाजपा अपने जांचे-परखे नेताओं के बदले दल बदलकर आए नेताओं को प्राथमिकता दे रही हैं। दलबदलुओं पर अधिक भरोसा दिखा रही हैं। राज्य में चुनावी परिदृश्य में हावी नजर आ रहे दोनों दलों के अंदर उम्मीदवारों के चयन को लेकर असंतोष है। तृणमूल के वरिष्ठ नेता एवं दक्षिण दिनाजपुर जिले के प्रमुख बिप्लब मित्रा ने कहा कि नए लोगों को टिकट देने एवं पुराने नेताओं को नजरंदाज किए जाने से पार्टी के जमीनी स्तर के कार्यकर्ताओं में रोष है। तृणमूल अकेले लड़ रही है और उसने लोकसभा की सभी 42 सीटों पर उम्मीदवारों के नामों की घोषणा कर दी है। भाजपा ने गुरुवार को राज्य में 28 उम्मीदवारों की पहली सूची जारी की थी। दोनों पार्टियों ने अपने निर्णय का यह कहते हुए बचाव किया है कि जीतने की संभावना उनके लिए सबसे अहम है। हालांकि तृणमूल का मानना है कि पार्टी की आपसी लड़ाई को खत्म करने का यह सबसे बेहतर तरीका है, जबकि भाजपा के लिए इन दलबदलुओं को चुनाव में उतारना मजबूरी है, क्योंकि उसके पास अपनी जीत सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त उम्मीदवार नहीं हैं। तृणमूल की सूची में शामिल 18 नए चेहरे में सात वे हैं, जो पिछले कुछ वर्षों में या तो कांग्रेस से या वामपंथी दलों से पार्टी में शामिल हुए हैं। भाजपा की सूची में छह ऐसे उम्मीदवार हैं, जो पहले या तो तृणमूल या माकपा से जुड़े हुए थे।

राजनीति से विदा होते विचार

हृदयनारायण दीक्षित

व्यक्ति से दल बड़ा है। दल से राष्ट्र बहुत बड़ा है। दल को राष्ट्र निर्माण का उपकरण होना चाहिए, लेकिन यहां राष्ट्र से दल बड़ा है और दल व्यक्ति की जागीर बना हुआ है

चुनाव असाधारण जनतंत्री महोत्सव हैं। दुनिया की निगाहें भारतीय आम चुनाव पर टिकी हैं। चुनाव इस या उस दल गठबंधन की हार-जीत का कर्मकांड नहीं होते। चुनाव दलतंत्र के विचार, व्यवहार व नीति कार्यक्रम की शल्य परीक्षा का अवसर होते हैं। दलतंत्र को अपनी विचारधारा के प्रचार का मौका मिलता है, लेकिन इस चुनाव में रंगत बदली है। पहले विचारधाराएं टकराती थीं। अब व्यक्तिगत आरोप व अश्लील शब्द आक्रमणों का चलन है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, मार्क्सवाद और समाजवाद जैसी विचारधाराओं वाले दल सिर्फ जीतने के लिए ही नहीं लड़ते थे। वे विचारधारा के प्रचार के लिए चुनाव का सदुपयोग करते थे। कांग्रेस भी पहले विचार आधारित राष्ट्रवादी पार्टी थी। गांधी, तिलक, विपिन चंद्र पाल जैसे नेता राष्ट्रवादी थे। बाद में यह 'वंदे मातरम' राष्ट्रगीत से भी दूर हो गई। फिर इसने पारिवारिक संपदा का रूप लिया। पार्टी प्रॉपर्टी नेहरू जी से पुत्री इंदिरा गांधी, उनसे पुत्र राजीव गांधी, फिर पत्नी सोनिया गांधी और अब पुत्र राहुल गांधी व प्रियंका को हस्तांतरित हो चुकी है। अंतरराष्ट्रीय विचारधारा के दावेदार वामदल भी सिकुड़ गए। उन्होंने लंबे समय तक बंगाल, त्रिपुरा और केरल में सरकार चलाई। उनका हाल बेहाल है। बिहारी महागठबंधन में 40 सीटों में से 20 राजद, नौ कांग्रेस, पांच उपेंद्र कुशवाहा की रालोसपा व तीन-तीन सीटें मांझी और सहनी में बंटी हैं। वहां भी कम्युनिस्ट पार्टियों को सिरे से किनारे कर दिया गया।

कांग्रेस मुक्त भारत का नारा कम्युनिस्ट मुक्त भारत की ओर बढ़ रहा है। स्वतंत्रता के बाद कांग्रेस ने लंबे समय तक सत्ता सुख भोगा। वह कमजोर होती गई। कम्युनिस्ट पार्टी का जन्म भारत में रूसी क्रांति की प्रेरणा से 1925 में हुआ था। कम्युनिस्ट आंदोलन कांग्रेस से सुविधा लेते हुए आगे बढ़ा था। इसी साल 1925 में डॉ. हेडगेवार ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। संघ ने हिंदू दर्शन को राष्ट्रीय नवजागरण का मंत्र बनाया। हिंदुत्व भारत का अपना स्वाभाविक विचार था। इसी प्रेरणा से 1951 में जनसंघ बना। जनसंघ का 1977 में जनता पार्टी में विलय हुआ। दोहरी सदस्यता के विवाद में अलग हुआ। 1980 में भाजपा बनी। वामपंथ व सांस्कृतिक राष्ट्रवाद दोनों की शुरुआत 1925 में हुई। राजनीतिक दृष्टिकोण से सांस्कृतिक राष्ट्रवादी भाजपा दुनिया की सबसे बड़ी पार्टी बनी। संप्रति केंद्र की सत्ता में है। कम्युनिस्ट भारत की आत्मा से नहीं जुड़े। उन्होंने भारतीय संस्कृति से ही टकराने का काम किया। सो वे विलुप्त होने के कगार पर हैं। कांग्रेस एक परिवार की पार्टी है। शीर्ष पर वरिष्ठों के लिए जगह नहीं है, लेकिन इसके सिकुड़ते जाने के और भी कई कारण हैं। इसने राष्ट्रवाद को सांप्रदायिक व सांप्रदायिक अल्पसंख्यकवाद को सेक्युलर सिद्ध करने का अभियान चलाया। इससे बहुसंख्यक भारतीय अपमानित हुए।

तकनीकी तौर पर देश में सात राष्ट्रीय दल हैं। भाजपा व कांग्रेस पूरे देश में हैं। तृणमूल, बसपा व राष्ट्रवादी कांग्रेस के आधार क्षेत्रीय हैं। माकपा व भाकपा तीन छोटे राज्यों तक सीमित हैं। तृणमूल व राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी कांग्रेस से टूटकर ही बनीं। शेष अधिकांश दलों का जन्म और विस्तार गैरकांग्रेसवाद से हुआ, लेकिन 2019 का चुनावी परिदृश्य काफी मनोरंजक है। कांग्रेस, भाजपा के अलावा किसी भी छोटे, लघु, मध्यम या घरेलू दल से गठबंधन को तैयार है। बिहार का राजद स्वभाव से कांग्रेस विरोधी था। इस चुनाव में कांग्रेस व राजद साथ-साथ हैं। परस्पर शत्रु रहे सपा और बसपा ने गठबंधन किया है। दोनों ने कांग्रेस को घास नहीं डाली, लेकिन कांग्रेस दोनों से दोस्ती को व्याकुल है। दिल्ली में सत्तारूढ़ आम आदमी पार्टी के संस्थापक अरविंद केजरीवाल ने कांग्रेस के खिलाफ आक्रामक अभियान चलाया था। अब वह भी कांग्रेस से ही दोस्ती के लिए बेताब हैं। कांग्रेस रूठी हुई है। वह पीछे पड़े हैं। चुनावी ऋतु में मर्यादाएं ताक पर हैं। सब गठबंधन के मूड में हैं। जो कभी राजग के साथ थे, कांग्रेस को गाली देते थे, अब उसी के साथ रूमानी हो रहे हैं। तीन-चार जिलों तक ही प्रभाव रखने वाले दल भी खूब मोलभाव कर रहे हैं।

भारतीय दलतंत्र की संरचना अजब-गजब है। विचारहीन स्थानीय दल हरेक चुनाव में अपनी प्रासंगिकता बनाए रखते हैं। वे प्रायः एक व्यक्ति या परिवार की संपदा होते हैं। वे एकाध स्थानीय जाति समूहों की अलग अस्मिता बनाए रखते हैं। उनका कोई विचार नहीं होता। वे अपने राज्य का भी प्रतिनिधित्व नहीं करते। सपा आरंभ से अब तक स्थानीय दल है। अजीत सिंह का रालोद तीन चार जिलों तक सिमटा है, लेकिन दावा राष्ट्रीय है। बसपा भी ऐसी ही है। तृणमूल पश्चिम बंगाल तक सीमित स्थानीय पार्टी है। दक्षिण भारत में भी परिवार आधारित दल हैं। ऐसी स्थानीय पार्टियां पारिवारिक संपदा जैसी हैं। ऐसे दलों के संस्थापक आजीवन राष्ट्रीय अध्यक्ष रहते हैं। उनके बाद उनके परिजन ऐसी पार्टी प्रॉपर्टी के मालिक बन जाते हैं। राजनीति में ऐसे लघु उद्योग संभवतः लाभकारी हैं तभी तो चुनाव आयोग में 2301 पंजीकृत दल हैं। मूलभूत प्रश्न है कि हरेक चुनाव में स्थानीय दलों की प्रासंगिकता क्यों बनी रहती है? और विचार आधारित दल इन्हें क्यों विशेष महत्व देते हैं?

भारत में क्षेत्रीय विविधता है। समाज में जातियां-उपजातियां हैं। समाज विभाजित है। कह सकते हैं कि यही विभाजन अनेक स्थानीय व्यक्तिवादी दलों के रूप में प्रकट होता है। ऐसा स्वाभाविक होता तो सारे दल अलग-अलग चुनाव भी लड़ते। वे चुनावी फायदे के लिए गठबंधन बनाते हैं। मोलभाव भी करते हैं। क्या ऐसी राजनीति देश सेवा का उपकरण हो सकती है? हम प्राचीन काल से एक राष्ट्र हैं। राष्ट्र की समृद्धि के अनेक रास्ते व विचार हो सकते हैं। राष्ट्र सर्वोपरिता ही सभी विचारधाराओं की आधारशिला है। दलों को अपनी विचारधारा के अनुसार लोकमत बनाना चाहिए। विचार आधारित राजनीतिक शिक्षण में ही जनतंत्र की मजबूती है। भारत का आमजन स्वभाव से राजनीति के प्रति उदासीन रहता है। गांधी जी ने यही बात 1895 में ही लिखी थी कि, 'भारतीय साधारणतया राजनीति में सक्रिय हस्तक्षेप नहीं करते। उनका धर्म उन्हें भौतिक प्रवृत्तियों के प्रति उदासीनता सिखाता है।' उन्होंने जनअभियान चलाकर भारत के मन को राष्ट्रवादी राजनीतिक बनाने के निरंतर प्रयास किए थे। आधुनिक दलतंत्र को भी ऐसा प्रयास करना चाहिए।

व्यक्ति से दल बड़ा है। दल विचार का संवाहक होता है। दल से राष्ट्र बहुत बड़ा है। दल को राष्ट्र निर्माण का उपकरण होना चाहिए, लेकिन यहां राष्ट्र से दल बड़ा है और दल व्यक्ति की जागीर बना हुआ है। अधिकांश दल निजी महत्वाकांक्षा का विस्तार हैं। सो जनतंत्र के सबसे बड़े उत्सव चुनाव में भी विचार की टक्कर नहीं, व्यक्तियों की ही टक्कर है। नीति कार्यक्रम व राष्ट्रीय स्वप्नों की चर्चा कम है। शत्रु राष्ट्र को भी लाभ पहुंचाने वाली बयानबाजी का दुस्साहस है। भारतीय जनतंत्र बेशक परिपक्व हुआ है। 16 आम चुनाव हो चुके हैं। राज्य विधानसभाओं के चुनाव इस संख्या से ज्यादा हैं। तो भी विचारहीन शोर ने चुनाव महोत्सव का आनंद छीन लिया है। अपशब्द हावी हैं। लोकतंत्र के चीरहरण की आशंका है। विचार के अभाव में शब्द अर्थवत्ता खोते हैं। अपशब्द उनकी जगह लेते हैं। तुलसीदास ने ठीक लिखा है-तुलसी पावस के समय धरी कोकिला मौन/अब तो दादुर बोलिहैं/हमें पूछि हैं कौन? मतदाताओं के जागृत विवेक पर भरोसा करना चाहिए।

(लेखक उत्तर प्रदेश विधानसभा के अध्यक्ष हैं)

response@jagran.com

वक्त की मांग है राष्ट्रीय कृषि नीति

केसी त्यागी

नेशनल हाईवे की तर्ज पर नेशनल इरिगेशन हाईवे की व्यवस्था देश में दूसरी हरित क्रांति को जन्म दे सकती है

आम चुनाव की घोषणा के साथ ही संसद और विधानसभाओं में महिलाओं को 33 फीसद आरक्षण देने के मुद्दे पर ओडिशा और पश्चिम बंगाल के कुछ दलों ने अमल करने की पहल की है। इसका स्वागत है। इसी तरह देश के किसान भी चुनाव में अपने सवालों की भागीदारी को लेकर आस लगाए बैठे हैं और आशा एवं विश्वास से सभी गतिविधियों पर नजर लगाए हुए हैं। हालांकि बीते लगभग दो-तीन दशकों के दौरान कृषि और कृषकों के सवालों को लेकर समय-समय पर आंदोलन हुए हैं और निःसंदेह इसमें कुछ सुधार भी हुए हैं। हाल में भी किसानों ने विरोध-प्रदर्शन के जरिये अपनी आवाज मुखर की है। बावजूद इसके कृषि को बदहाली से निकालने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

एक समय था जब देश पीएल-480 गेहूं खाने को मजबूर था और आज किसानों एवं कृषि वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों के बाद भारत गेहूं और चावल का दूसरा बड़ा उत्पादक देश है। दाल, गेहूं, चीनी आदि के उत्पादन में भी देश अग्रणी है। इसके बावजूद देश का कृषक वर्ग सामाजिक-आर्थिक और विकास के कई मानकों पर काफी पीछे है। शिक्षा, चिकित्सा, आवास आदि सुविधाओं में कमी समेत उनकी संपूर्ण जीवनशैली में पिछड़ापन व्याप्त है। आधारभूत जरूरतों का अभाव और प्राकृतिक-कृत्रिम आपदाओं के कारण फसलों का नष्ट हो जाना उनकी मानसिक-आर्थिक तंगी की बड़ी वजह है। कर्ज के निरंतर बढ़ते बोझ के कारण किसानों द्वारा आत्महत्या परेशान करती रही है। दिनोंदिन कृषि का घटता रकबा भी चिंताजनक है। पिछले चार दशकों के दौरान कृषि की वास्तविक आय में आई कमी सबक लेने योग्य है। आर्थिक सहयोग संगठन के एक अध्ययन के अनुसार पिछले 17 वर्षों में उपज की कीमत कम मिलने के कारण किसानों को करीब 45 लाख करोड़ रुपये का नुकसान हुआ है। एक और रिपोर्ट के अनुसार हाल की कृषि आय अपने सबसे निचले पायदान पर रही है। इस क्षेत्र में सार्वजनिक एवं निजी दोनों तरह के कुल निवेश में निरंतर गिरावट दर्ज की गई है। जैसे कि 2011-12 में निवेश जीडीपी का तीन फीसद था जो 2016-17 में घटकर 2.2 फीसद रह गया। ऐसी सूरत में कृषि की बदहाली की अब और अनदेखी नहीं हो सकती।

2011 की जनगणना के अनुसार देश में कुल 542 में से मात्र 57 संसदीय सीटें शहरी क्षेत्रों में और शेष 144 अर्ध-शहरी एवं 342 ग्रामीण सीटें हैं। इसके बावजूद यह वर्ग अब तक राजनीतिक अनदेखी का शिकार रहा है। हालांकि राहत की बात यह है कि अब कृषि और कृषकों की समस्याएं राजनीतिक विमर्श का विषय बनने लगी हैं। आर्थिक सुधारों के बाद बाजारवाद के दौर में खेती और किसान अप्रासंगिक होते गए जो समकालीन राजनीति में पुनः मुखर हुए हैं। गत दिसंबर में तीन राज्यों के चुनावी नतीजे और कांग्रेस की कर्ज माफी नीति इसके ताजा उदाहरण हैं। अब केंद्र में सरकार आने पर देश में कर्ज माफी का वादा चर्चा में है। पिछले लोकसभा चुनावों में कृषक वर्ग का बड़ा सहयोग मौजूदा सत्तारूढ़ राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन यानी राजग को मिला था।

इसमें दोराय नहीं कि राजग सरकार द्वारा किसान हित में कई बड़े फैसले लिए गए। चुनावी लाभ के लिए ही सही, अब तक की सरकारें कर्ज माफी और कर्ज की सीमा बढ़ाकर किसानों की वाहवाही एवं समर्थन लूटती रही हैं। निःसंदेह कर्जमाफी स्थायी समाधान नहीं है, क्योंकि पंजाब में कर्ज माफी के बावजूद पिछले एक वर्ष में 430 किसानों द्वारा आत्महत्या की जाने की खबर है। यह पहली बार है जब आम बजट में छोटे किसानों को सालाना 6,000 रुपये के सहयोग से उनकी आय को एक आकार देने का काम हुआ है। वहीं न्यूनतम समर्थन मूल्य यानी एमएसपी में भी 50 फीसद की बढ़ोतरी मोदी सरकार की उपलब्धि रही। हालांकि मौजूदा घोषित एमएसपी ए-2 एफएल प्रणाली से निर्धारित है, जबकि स्वामीनाथन आयोग के अनुसार सी-2 फॉर्मूले से निर्धारित एमएसपी किसान एवं उनके संगठनों की मांग रही है। अब किसान हितों की अनदेखी किसी भी दल को महंगी पड़ेगी। अब प्रत्येक दल को कृषि को लेकर अपना एजेंडा स्पष्ट करना होगा। जिस तरह से 1951 में एक औद्योगिक नीति तैयार की गई थी, उसी तरह की एक राष्ट्रीय कृषि नीति क्यों नहीं हो सकती? एमएसपी तय करने का मौजूदा त्रुटिपूर्ण तरीका क्यों नहीं बदला जा सकता? तय एमएसपी न मिलने पर सजा या जुर्माने का प्रावधान क्यों नहीं होना चाहिए? किसी भी वर्ष को मानक वर्ष मानकर उसके समानुपात में कृषि उत्पाद के दाम तय होने चाहिए। प्रत्येक वर्ष गन्ना किसानों को भुगतान के लिए मिलों के चक्कर काटने पड़ते हैं। इस दिशा में अब तक का कानून-शुगरकेन ऑर्डर विफल साबित हुआ है।

खेती को आर्थिक रूप से स्थायी पेशा बनाए जाने की कवायद देश की आर्थिकी को मजबूत और आत्मनिर्भर ही बनाएगी। इसके लिए सिंचाई सुविधा, उत्पादन लागत पर काबू पाना, बिजली एवं सड़क की सुविधा तथा सबसे महत्वपूर्ण किसानों को अपनी फसल अपने अनुकूल समय, मात्रा एवं जगह से बेचने की स्वतंत्रता उन्हें सशक्त करेंगी। जब औद्योगिक उत्पादों पर ऐसी बंदिशें नहीं हैं तो कृषि उत्पादों पर क्यों? आए दिन किसानों द्वारा आक्रोशित होकर सड़कों पर अपने उत्पाद फेंकने की खबरें सुर्खियां बनती हैं। यहां भी बिचौलियों का बाजार ही गर्म होता है। स्पष्ट है कि खेती में तकनीकी के इस्तेमाल से शारीरिक श्रम कम होगा। इससे खेती के प्रति आकर्षण के साथ ही बुआई-कटाई समय कम हो जाएगा। सस्ते कर्ज, सब्सिडी आदि प्रोत्साहनों से इसमें निवेश बढ़ाया जा सकता है।

इसी तरह क्षति का आकलन भी एक बड़ी समस्या बन रही है। कई बार हास्यास्पद राशि मुआवजे के रूप में मिलती है। रिमोट सेंसिंग के जरिये आकलन कर 30 दिनों के भीतर बीमा का भुगतान किसानों के हित में होगा। भंडारण क्षमता बढ़ाना सरकार के लिए बड़ी चुनौती है। चाय, कॉफी, रबर, तंबाकू, मछली पालन आदि के मौजूदा कमोडिटी बोर्ड में किसानों की भी भागीदारी होनी चाहिए। ट्रांसपोर्ट इंफ्रास्ट्रक्चर, कोल्ड स्टोरेज, वेयर हाउसिंग तथा प्रोसेसिंग के लिए भारी निवेश की आवश्यकता है। इनके अभाव में प्रति वर्ष हजारों टन अनाज सड़-गल जाते हैं और मौसमी फल-सब्जियां लागत मूल्य भी नहीं निकाल पातीं। बढ़ती महंगाई के अनुरूप एक तय आयु सीमा के बाद किसानों को पेंशन, प्रधानमंत्री बीमा योजना का पूरा प्रीमियम तथा ट्यूबवेल से सिंचाई की स्थिति में निःशुल्क बिजली आदि की व्यवस्थाएं किसान वर्ग को आकर्षित करेंगी। वहीं नेशनल हाईवे की तर्ज पर नेशनल इरिगेशन हाईवे की व्यवस्था दूसरी हरित क्रांति को जन्म दे सकती है।

(लेखक जदयू के राष्ट्रीय प्रवक्ता हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

वचनबद्धता

भारतीय संस्कृति में वचनबद्धता का बहुत महत्व है। प्राचीन कहावत है कि प्राण जाए पर वचन न जाए। मानव चरित्र की इस श्रेष्ठता के सभी कायल हैं। वचनबद्धता कोई हठधर्मिता नहीं है। हठ कभी भी गुण और सहज चरित्र नहीं हो सकता। हठ अंधविश्वास और दुस्साहस से पैदा होता है। वचनबद्धता एक संकल्प है जो धर्म और मानवीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में लिया जाता है। दिए गए वचन का महत्व तभी समझा जा सकता है जब धर्म और जीवन व्यवहार का ज्ञान और उनके प्रति संवेदनशीलता हो। धर्म का साधारण सा अर्थ ईश्वर में आस्था होना है। जीवन में व्यवहार ऐसा हो जिससे ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त की जा सके। ईश्वर की राह सरल नहीं है। जीवन व्यवहार में सदा मानदंड बने रहें, यह अत्यंत कठिन है।

परीक्षा की घड़ियां बार-बार आती रहती हैं। कभी प्रलोभन, कभी डर, कभी प्रताड़ना और कभी-कभी जीवन भी दांव पर लग जाता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि कलियुग माया और विकारों का युग है। इसका जाल चारों ओर फैला हुआ है। इस जाल से कोई एक ही बच पाता है। माया और विकारों से बच जाना ही सच्चा पौरुष और वीरता है। कोई मनुष्य निर्बल और असहाय मात्र माया और विकारों के आगे होता है। इनके जाल में फंसा हुआ कभी वीर हो ही नहीं सकता। ऐसे मनुष्य से आशा करना व्यर्थ होता है कि वह वचन पर दृढ़ रहेगा। उसकी चेतना और संवेदना पंगु हो जाती है। वह लोभ, अहं, काम, क्रोध वश कुछ भी कर सकता है, किंतु जहां स्वार्थ सिद्धि न हो, पीछे हटते हुए देर नहीं लगती।

धर्म और मानवता स्वार्थ से परे है। इसमें मात्र देना ही है, जब मनुष्य धर्म और मानवता के लिए खड़ा होता है, तब परमात्मा उसे बल देता है। वह भय, लोभ, दबाव से मुक्त हो जाता है। उसके अंदर मृत्यु का भय भी समाप्त हो जाता है। यही कारण था कि महापुरुषों, धर्म नायकों ने परोपकार की भावना से अद्भुत त्याग और बलिदान किए। ऐसे लोग ही-प्राण जाए पर वचन न जाई-की पावन भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं। मूल्यों और सिद्धांतों पर दृढ़ता जीवन को सरल और निष्कंटक बनाने का इकलौता मार्ग है। धर्म से जुड़कर ही मनुष्य माया और विकारों के चारों ओर फैले हुए जाल से बच सकता है।

डॉ. सत्येंद्र पाल सिंह

मोटापे की बढ़ती समस्या

सौरभ पाठक

सबसे महत्वपूर्ण है, स्वस्थ रहना। जब लोग स्वस्थ रहेंगे, तभी अपने कार्य को एकाग्रता तथा रुचिपूर्ण तरीके से कर सकेंगे

आज लोगों की जीवनशैली दिन-ब-दिन खराब होती जा रही है। लोग अपने कार्यों में इस कदर व्यस्त रहते हैं कि खुद के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए भी समय नहीं निकाल पा रहे। नतीजतन वे कई प्रकार के बीमारियों से ग्रस्त होते चले जा रहे हैं। उन्हीं बीमारियों में से प्रमुख है मोटापा। मोटापा शब्द सुनने में तो सामान्य प्रतीत होता है, किंतु इसके परिणाम घातक होते हैं। मोटापा का वास्तविक अर्थ होता है, शरीर का सामान्य से अधिक वजन होना। शरीर का वजन मुख्यतः तीन वजहों से बढ़ता है-हड्डियों के घनत्व ज्यादा होने से, मांस ज्यादा होने से या फिर शरीर में खराब वसा की अधिकता के कारण। शरीर का असामान्य वजन ज्यादातर खराब वसा के कारण ही होता है।

भारतीयों में ज्यादातर 'सेंट्रल ओबेसिटी' पाई जाती है। सेंट्रल ओबेसिटी का अर्थ है, एब्डॉमिनल एरिया में खराब वसा का एकत्रित हो जाना। यानी तोंद निकलना। मोटापे की समस्या की जांच के लिए बीएमआइ यानी बॉडी मास इंडेक्स की गणना की जाती है। बीएमआइ की सामान्य रेंज 18.5 से 23.5 के बीच होती है। इसके अलावा लोग अपने शरीर के वजन की और भी आसान तरीके से गणना करके मोटापे की स्थिति का पता लगा सकते हैं। करना यह है कि अपनी लंबाई को सेंटीमीटर में माप लें और उसमें से सौ घटा दें। इस प्रक्रिया से जो भी वजन आएगा, वह उस व्यक्ति का आदर्श वजन कहलाएगा।

मोटापे की समस्या इतनी तेजी से इसलिए बढ़ रही है, क्योंकि लोगों का जीवन घर और दफ्तर के एक बंद कमरे तक ही सीमित हो चुका है। लोग सुबह से शाम तक कुर्सी पर बैठे-बैठे काम करते रहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप शरीर धीरे-धीरे शिथिल पड़ता जाता है। दूसरी वजह है, खान-पान में बदलाव। लोगों का आकर्षण जंक फूड की तरफ बढ़ता जा रहा है, जिसके कारणवश लोग जाने-अनजाने मोटापे रूपी गंभीर बीमारी की जकड़न में फंसते जा रहे हैं। गौरतलब है कि मोटापा लोगों को मधुमेह, उच्च रक्तचाप, कैंसर, हार्ट अटैक, ब्रेन स्ट्रोक जैसी जानलेवा बीमारियों का शिकार बनाता है।

मोटापे की समस्या से बचाव या निजात पाने के लिए सर्वप्रथम अपनी जीवनशैली में सकारात्मक बदलाव लाना होगा। चिकित्सक की सलाह के साथ-साथ नियमित रूप से योग या किसी भी प्रकार के व्यायाम को अपने जीवन का अभिन्न हिस्सा बनाना होगा। लोगों को पैदल चलने की ज्यादा कोशिश करनी चाहिए। एस्केलेटर की जगह सीढ़ियों का इस्तेमाल करने से अतिरिक्त कैलोरी बर्न होती है और खराब वसा शरीर से जल्दी खत्म होती है। खान-पान में ज्यादा वसायुक्त और जंक फूड से परहेज करना तथा हरी सब्जियों के सेवन को बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। संतुलित तथा फलयुक्त आहार को अपनी आदत में शामिल करना अनिवार्य है। लोगों को यह समझना होगा कि सबसे महत्वपूर्ण है, स्वस्थ रहना। जब लोग स्वस्थ रहेंगे, तभी अपने कार्य को एकाग्रता तथा रुचिपूर्ण तरीके से कर सकेंगे।

(लेखक मेडिकल छात्र हैं)

मेलबाक्स

सोच-समझकर करें मतदान

मतदाताओं के फैसले की कसौटी शीर्षक से लिखे अपने लेख में संजय गुप्त ने मतदान करते समय मतदाताओं को राष्ट्रीय हित के साथ-साथ राजनीतिक दलों की कथनी और करनी में अंतर पर भी गौर करने की सलाह दी है। यह बिल्कुल सही बात है। अब लोकसभा चुनाव की तिथि जारी हो चुकी है और सभी राजनीतिक दल अपने-अपने प्रत्याशियों को मैदान में उतार रहे हैं। प्रत्याशी तय करते समय राजनीतिक दलों के अपने कुछ भी मानक हों, लेकिन उन्हें जिताकर संसद भेजने का कार्य जनता ही करती है। इसलिए यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि जनता सोच समझकर अच्छे प्रत्याशी को चुनकर संसद भेजे। एक अच्छा सांसद काफी हद तक अपने क्षेत्र का विकास कर सकता है। इसके साथ-साथ मतदाताओं को राजनीतिक दलों की पूर्व की कार्यशैली को परखने की आवश्यकता होती है। एक बड़ा प्रश्न है कि जिन दलों ने अब तक शासन किया है, उनको परखने में आम मतदाता को कोई परेशानी नहीं होगी, लेकिन जिन दलों ने केंद्र में अभी तक शासन नहीं किया है, उन्हें कैसे परखा जाए? क्षेत्रीय दलों को राष्ट्रीय हित की जिम्मेदारी देने से पहले यह देखना उचित होगा कि उन्होंने क्षेत्रीय विकास पर कितना बल दिया है? यदि उन्होंने अपने शासनकाल में क्षेत्रीय विकास किया है तो निःसंदेह वे राष्ट्रीय हित के मामलों में श्रेष्ठ ही साबित होंगे। स्पष्ट है कि मतदाताओं को बहुत ही सोच समझकर मतदान करना चाहिए, क्योंकि यह मौका पांच वर्ष बाद ही आता है।

सर्वजीत आर्या, कन्नौज, उत्तर प्रदेश

पर्यावरण के प्रहरी

आज हम लगातार प्रकृति का दोहन कर रहे हैं, जबकि इसके संरक्षण की ओर किसी का ध्यान नहीं है। इस तरह भावी पीढ़ी का भविष्य अंधकारमय लग रहा है। लेकिन जीव प्रेमी और पर्यावरण संरक्षण के लिए राजस्थान के बिश्नोई संप्रदाय ने पूरी दुनिया के लिए एक मिसाल कायम की है। यह संप्रदाय लंबे समय से प्रकृति के काफी गहरा करीब रहा है। यह समाज समय-समय पर प्रकृति प्रेम के लिए परीक्षाएं देता रहा है। इस समाज की महिलाएं हों या पुरुष सदा से ही पर्यावरण हितैषी रहे हैं। यह समाज विलुप्त होने की कगार पर खड़े (काला हिरण, मोर, खरगोश इत्यादि) वन्य प्राणियों को शिकारियों से बचाता रहा है तथा हर महीने अमावस्या को पर्यावरण शुद्धि के लिए घी और नारियल का हवन करते हैं। राजस्थान की अर्ध-शुष्क जलवायु एवं उच्च तापमान वाली पृष्ठभूमि मे पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन के लिए सरकार के साथ इस समाज का भी अहम योगदान रहा है। समस्त विश्व को एकजुट होकर पर्यावरण संरक्षण के अपने दायित्वों का निर्वहन करना चाहिए ताकि भावी पीढ़ियों का भविष्य उज्ज्वल हो सके।

shriniwaspanwar1999@gmail.com

घोषणापत्र का महत्व

राजनीतिक पार्टियों को अपने चुनावी घोषणापत्र में 5 वर्ष की सुव्यवस्थित कार्य योजना बनाकर जनता के सामने प्रस्तुत करना चाहिए। विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य, बेरोजगारी, कृषि विकास, मजदूर कल्याण, महिला एवं बाल विकास तथा विदेश नीति पर अपनी पार्टी का रुख साफ करना चाहिए। रक्षा मंत्रालय को सक्षम बनाने और सैनिकों के कल्याण की बात भी विशेष रूप से घोषणापत्र में शामिल होनी चाहिए। कोई भी दल अपने चुनाव घोषणापत्र में ऐसा कोई वादा जनता से न करे जिसे पूरा करने में उन्हें बाद में परेशानी हो। सभी राजनीतिक दलों की यह जवाबदेही बनती है कि वे अपने घोषणापत्र में देश के सर्वांगीण विकास पर योजनाएं क्रियान्वित करने के संबंध में फोकस करें।

lalit.mahalkari@gmail.com

राजनीतिक सद्भाव

जो उड़ी और पुलवामा हमले के बाद हुआ है वैसा कुछ मुंबई हमले के बाद क्यों नहीं हुआ? पाकिस्तान में आतंकियों के ठिकाने पर हमला हर भारतीय चाहता भी था। पाकिस्तान डे पर सरकार द्वारा पाक उच्चायोग के कार्यक्रम के बहिष्कार एवं पाकिस्तानी समकक्ष को पत्र भेजने में कई को विरोधाभास लग रहा है। उच्चायोग का बहिष्कार केवल इसलिए किया गया, क्योंकि वहां हुर्रियत नेताओं को निमंत्रित किया गया था। हुर्रियत का शाब्दिक अर्थ आजादी होता है। अभिव्यक्ति की आजादी देशहित पर कुठाराघात नहीं हो सकती। वहीं पाकिस्तान के प्रधानमंत्री को औपचारिक पत्र भेजना दो राज्यध्यक्षों के मध्य मात्र एक राजनीतिक सद्भाव है, जो उचित है।

शैलेंद्र सक्सेना, नई दिल्ली

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।